RNI 26281/74 रजि.नं. पी.बी./जे.एल.-011/2018-20

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्षः 45, अंक : 18 एक प्रति 2 : रुपये

कुल पृष्ठ : 8

रविवार 26 जुलाई, 2020

विक्रमी सम्वत् 2077, सृष्टि सम्वत् 1960853121

दयानन्दाब्द : 196 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये

आजीवन शुल्क : 1000 रुपये

दूरभाष : 0181-2292926, 5062726

E-mail: apspunjab2010@gmail.com,

www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष-45, अंक : 18, 23-26 जुलाई 2020 तदनुसार 11 श्रावण, सम्वत् 2077 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

आर.के.आर्य कालेज नवांशहर द्वारा वेबिनार के माध्यम से टीचर ट्रेनिंग वर्कशाप का आयोजन

श्री सुदर्शन शर्मा जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब आर.के.आर्य कालेज नवांशहर में आयोजित वेबिनार के शुभारम्भ के अवसर पर सम्बोधित करते हुये। इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महामंत्री श्री प्रेम भारद्वाज जी, डा. वागीश आचार्य जी प्रधानाचार्य आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय एटा, श्रीमती रेणुका ठुकराल जी, श्री अशोक परूथी जी एडवोकेट रजिस्ट्रार आर्य विद्या परिषद पंजाब एवं श्री विनय आर्य जी उप मंत्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा एवं महामंत्री दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा ने इस वेबिनार को सम्बोधित किया। यह वेबिनार 13 जुलाई से 16 जुलाई 2020 चार दिन तक चला।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के तत्वावधान में आर्य विद्या परिषद द्वारा संचालित संस्था आर.के. आर्य कॉलेज नवांशहर में 13 जुलाई सोमवार से 16 जुलाई वीरवार तक टीचर ट्रेनिंग वर्कशॉप का आयोजन किया गया। इस कॉंफ्रेंस का मूल विषय शिक्षा से संस्कार रखा गया। इसमें पंजाब के सभी शिक्षण संस्थानों के प्राध्यापकों एवं अध्यापकों ने भाग लिया। जूम एप के माध्यम से करवाई गई इस वर्चुअल मीटिंग में लगभग 500 प्रतिभागियों ने भाग लिया। इस आयोजन का शुभारम्भ आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान श्री सुदर्शन शर्मा जी के आशीर्वचनों से किया गया। उन्होंने कहा कि शिक्षा के क्षेत्र में आर्य समाज निरन्तर उन्नति के शिखर को छू रहा है। आर्य समाज की स्थापना महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने की थी। उस समय भी आर्य समाज का उद्देश्य लोकहित, समाज कल्याण एवं परोपकार था। शिक्षा के क्षेत्र में नारी शिक्षा, नैतिक एवं संस्कारी शिक्षा को जन-जन तक पहुंचाना हमारा उद्देश्य रहा है। इसी मन्तव्य को लेकर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा आर्य विद्या परिषद के सहयोग से आर. के. आर्य कॉलेज नवांशहर में एक टीचर ट्रेनिंग वर्कशाप का आयोजन किया गया है जिसका विषय है शिक्षा में संस्कार। मैं सर्वप्रथम कॉलेज के प्रधान श्री विनोद भारद्वाज एवं प्रिंसिपल डॉ. संजीव डाबर को हार्दिक बधाई देता हूँ। मैं सभी वक्ताओं का हार्दिक अभिनन्दन करता हूं जिनके प्रेरणास्पद उद्बोधन हमें सुनने को मिलेंगे। मैं अपनी सभा के साथियों श्री प्रेम भारद्वाज जी महामन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, श्री अशोक परूथी जी रजिस्ट्रार आर्य विद्या परिषद पंजाब एवं अन्य सभी सहयोगियों का हार्दिक धन्यवाद करता हूँ।

प्रथम दिवस सर्वप्रथम आचार्य डॉ. वागीश जी ने ईश्वर की संकल्पना पर अपने विचार प्रस्तुत किए। उन्होंने कहा कि इस संसार में जितनी भी वस्तुएं हैं, उन्हें बनाने वाला कोई न कोई कर्ता जरूर है। बिना कर्ता के कोई भी क्रिया नहीं होती। जब एक साधारण वस्तु बिना बनाने वाले के नहीं बन सकती उसी प्रकार यह संसार, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड़ बिना किसी सत्ता के नहीं बन सकता, नहीं चल सकता। जिस सत्ता के कारण यह संसार चल रहा है, सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी, नक्षत्र गति कर रहे हैं, उसी सत्ता को ईश्वर कहा गया है। ईश्वर एक है जो सर्वव्यापक है, सर्वशक्तिमान है, सर्वान्तर्यामी है। वही सर्वशक्तिमान सत्ता इस संसार को चला रही है। आज का मनुष्य उस एक ईश्वर के सच्चे स्वरूप को भुलाकर पाखण्ड़ और अन्धविश्वास में फंसा हुआ है।

प्रथम दिन के दूसरे सत्र का भाषण श्रीमती रेणुका ठुकराल जी ने बहुत प्रभावशाली दिया। उन्होंने कहा कि एक शिक्षक को सदा अपने विद्यार्थियों के लिए उपलब्ध रहना चाहिए व कभी क्रोध नहीं करना चाहिए। ये विचार उन्होंने अपने श्रोताओं से सांझे करते हुए शिक्षक की खूबियां बताई। उन्होंने शिक्षकों के लिए प्रभावशाली बोलने के महत्त्व पर भी प्रकाश ड़ाला। रेणुका जी ने इस बात पर भी जोर दिया कि शिक्षक को अपना मूल्यांकन रोज करना चाहिए जिससे वह अपनी कमियों को तलाश कर उन्हें ठीक कर सके तथा खुद को बेहतर बना सकें।

कॉंफ्रेंस के दूसरे दिन के सत्र को प्रारम्भ करते हुए आर्य विद्या परिषद पंजाब के रजिस्ट्रार श्री अशोक परूथी जी ने अपने विचार रखे। इस सत्र के वक्ता डॉ. राकेश आर्य ने एक शिक्षक की जिम्मेवारियों पर बात की। उनके अनुसार हमें सदा प्रकाश के ऊपर सूर्य की ओर और सूर्य के ऊपर ईश्वर की ओर बढ़ना है। यदि शिक्षक को अपने पेशे से प्यार है तो उसे थकना नहीं चाहिए। पाँडवों की कहानी में गुरू द्रोणाचार्य का उदाहरण देते हुए शिक्षक के महत्त्व को बताया कि कभी भी गुरू को क्रोध नहीं करना चाहिए। शिक्षक को कभी भी अपनी करनी और कथनी में अन्तर नहीं रखना चाहिए। उन्होंने जीवन के पाँच सूत्र बताए- 1. ऊर्जा, 2. अपने काम के प्रति प्यार, 3. विकर्षण, 4. अपने लिए समय निकालो, 5. सोने से पहले पूरे दिन की समीक्षा।

दूसरे दिन के दूसरे सत्र के वक्ता डॉ. आचार्य वागीश ने जर्मन और अमेरिकन तत्त्ववेत्ता का उदाहरण देते हुए ईश्वर में विश्वास के मुद्दे को उठाया। उन्होंने कहा कि हमें हमेशा पूर्ण सत्य की खोज में लगे रहना चाहिए। सोचने की आजादी सबसे बड़े सौभाग्य की बात है। सुनी हुई बात को मानना ज्ञान नहीं जानकारी है। उन्होंने कहा कि ईश्वर में विश्वास कीजिए अन्धविश्वास में नहीं। तर्क ही मनुष्य को ज्ञान के मार्ग पर आगे बढ़ाता है।

तीसरे दिन की संस्कारशाला का शुभारम्भ करते हुए सर्वप्रथम आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महामन्त्री श्री प्रेम भारद्वाज जी ने अपने विचार रखे। उन्होंने सर्वप्रथम आयोजकों को इस सुन्दर आयोजन के लिए बधाई दी। श्री प्रेम भारद्वाज जी ने कहा कि यह हमारा सौभाग्य है कि हमें आर्य जगत् के उच्च कोटि के विद्वान् आचार्य डॉ. वागीश जी के विचार सुनने का अवसर मिल रहा है। आचार्य जी के विचारों से ईश्वर के विषय में हमारी कई शंकाओं का समाधान हो गया है। उन्होंने शिक्षा से संस्कार विषय पर प्रकाश ड़ालते हुए कहा कि एक सच्चा और निष्ठावान गुरू ही होता है जो अपने शिष्यों का सही मार्गदर्शन कर सकता है, उनके जीवन को एक नई दिशा दे सकता है। इसलिए शास्त्रों में गुरू और शिष्य का सम्बन्ध पिता-पुत्र के सम्बन्ध के समान माना गया है। माता-पिता के बाद गुरू ही होता है जो राष्ट्र की भावी पीढ़ी का निर्माण करता है। इसलिए एक अध्यापक को चाहिए कि वे विद्यार्थियों में अपने विषय के साथ-साथ अच्छे गुणों का विकास करें जिससे वे धार्मिक, चरित्रवान और देशभक्त बनें।

आचार्य वागीश जी ने इस अवसर पर अपने विचार रखते (शेष पृष्ठ आठ पर)

सात्विक आहार करो-वेद

ले.-शिवनारायण उपाध्याय, दादाबाडी कोटा (राज.)

प्राणी मात्र को जीवित रहने के लिए तीन पदार्थों की अत्यन्त आवश्यकता होती है। ये तीन पदार्थ है-हवा, पानी और भोजन सामग्री। इन तीनों में हवा सबसे अधिक महत्व रखती है। हवा के अभाव में प्राणी कुछ क्षण ही जीवित रह पाता है। दूसरा स्थान पानी का है, हमारे शरीर का अधिकांश भाग तरल है। इस तरलता को बनाये रखने के लिए पानी की आवश्यकता होती है। पानी के बिना जीवन कुछ दिनों तक ही चल पाता है। फिर तीसरा स्थान खाद्य पदार्थों का आता है। भोजन से हमें कार्य करने के लिए ऊर्जा प्राप्त होती है। यह शरीर की टूट-फूट की मरम्मत करता है। भोजन के द्वारा ही शरीर का विकास भी होता है। भोजन शरीर के तापमान को स्थिर बनाये रखता है। हम जैसा भोजन करते है वैसा ही हमारा मन बन जाता है। कहावत भी है, 'जैसा खाये अन्न वैसा बने मन।' खाद्य पदार्थ को तीन श्रेणियों में विभाजित किया जाता है। सात्विक भोजन, राजसी भोजन और तामसिक भोजन वाले खाद्य पदार्थ। सात्विक भोजन में गेहूं, बाजरा, चावल, मक्का आदि अनाज, तुअर, मूंग, मसूर, उड़द आदि दालें नमक, मिर्च और मसाले न्यून मात्रा में तथा घी, दूध, दही फल-फूल की मात्रा सम्मिलित होती है। राजसी भोजन में मिर्च, मसालों की अधिकता के साथ-साथ घी, दूध, दही की मात्रा कुछ अधिक रहती है। तामसिक भोजन में मांस निर्मित पदार्थ मुख्य होते हैं। पेय पदार्थों में तामस प्रकृति के लोग शराब, भांग, गांजा आदि नशीले पदार्थों का भी उपयोग करते हैं। वेद में सात्विक भोजन को ही विशेष रूप से स्थान दिया गया है।

धान्यमसि धिनुहि देवान् प्राणाय त्वोदानाय त्वा व्यानाय त्वा।

दीर्घामनु प्रसितिमायुषे धां देवो वः सविता हिरण्य पाणिः प्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेण पाणिना चक्षुषे त्वा महीनां पयोऽसि।।

यजुर्वेद 1.20

विशेष-यजुर्वेद के इस मंत्र में सात्विक आहार के वर्णन को स्थान दिया गया है। सात्विक आहार से सद्गुणों को पूर्ण करने वाली बुद्धि का निर्माण होता है।

अर्थ-(धान्यम् असि) तू धान्य है, पोषण में उत्तम है। स्वस्थ शरीर, निर्मल मन व तीव्र बुद्धि का तू निर्माण करता है। (देवान् धिनुहि) हमारे जीवन में दिव्य गुणों को प्राणित कर। तेरे द्वारा मन की शुद्धि से हममें सात्विक गुणों का विकास होवे। (प्राणाय) प्राण के विकास के लिए (त्वा) हम तुझे स्वीकार करते हैं। (त्वा) तुझे (उदानाय) उदान वायु के ठीक कार्य करने के लिए स्वीकार करते हैं।

उदानः कण्ठ देशे स्यात्=गले के स्थान में कार्य करने वाला वायु ठीक होवे। हम (त्वा) तुझको (व्यानाय) सर्व शरीर व्यापी व्यान वायु के लिए स्वीकार करते हैं। (दीर्घाम्) अत्यन्त विस्तृत शत वर्ष गामिनी (प्रसितिम्) कर्म तन्तु सन्तति का (अनु) लक्ष्य करके (अनुर्लक्षणे) और इस प्रकार (आयुषे) उत्तम कर्ममय जीवन के लिए (इ गतौ) हे धान्य। (धाम्) मैं तेरा ग्रहण करता हूँ। इस धान्य के प्रयोग से मुझे दीर्घ जीवन प्राप्त होवे। (सविता देवः) सब प्राण शक्ति का उत्पादक यह सूर्य देव (वः) तुम्हें (अच्छिद्रेण) अपने निर्दोष (पाणिना) किरण रूपी हाथों से (प्रतिगृभ्णातु) ग्रहण करे। हे सूर्य देव। मैं (त्वा) तुझे (चक्षुषे) दृष्टि की वृद्धि के लिए ग्रहण करता हूँ। (महीनाम्) अन्य सब पूजनीय मनुष्य को महान् बनाने वाली शक्तियों का (पयः) वर्धन करने वाला है।

भावार्थ-दिव्य गुणों के वर्धन के लिए बुद्धि का सात्विक होना आवश्यक है। बुद्धि की सात्विकता के लिए शाकाहार आवश्यक है। साथ ही सूर्य किरणों का सम्पर्क भी अत्यन्त उपयोगी है।

भोजन का चुनाव शक्ति देने की दृष्टि से होना चाहिए।

उखां कृणोतु शक्त्या बाहुभ्यामदितिर्धिया माता पुत्रं पथोपस्थे साग्निं बिभर्तु गर्भऽअत मखस्य शिरोऽसि।

यजुर्वेद 11.57

अर्थ-पत्नी (उखाम्) पाक स्थली को (शक्त्या) शक्ति के दृष्टि कोण से (कृणोतु) करे। जिस भी भोजन का परिपाप करे उसमें दृष्टि कोण शक्ति प्राप्ति का होवे। (अदिति) घर में सबके स्वास्थ्य को अखण्डित रखने वाली यह गृहिणी (बाहुभ्याम्) अपने हाथों से (धिया) बुद्धि पूर्वक (कृणोतु) इस भोजन को बनावे। (माता) माता (पुत्रम्) पुत्र को (यथा) जैसे (उपस्थे) गोद में धारण करती है इसी प्रकार (सा) वह गृहिणी (अग्निम्) इस पाकाग्नि को (गर्भे) अपने गर्भ में (अविभर्तु) धारण करे। वह ही (मखस्य) इस गृहस्थ यज्ञ का (शिरः असि) सिर है।

वेद यज्ञ शेष का खाना सर्व श्रेष्ठ मानता है।

उदु त्वा विश्वे देवाऽ अग्ने भरन्तु चित्तिभिः।

स नो भव शिवस्त्वꣳ सु प्रतीको विभावसु।।

यजु. 12.31

अर्थ-यज्ञ शेष को खाने वाला व्यक्ति (उत्, उ) निश्चय से विषय वासनाओं से ऊपर उठता है। (उत्) यही वास्तविक तपस्या है। (अग्ने) हे आगे बढ़ने वाले (त्वा) तुझ तापस को (विश्वे देवा) सब देव (चित्तिभिः) ज्ञानों से (भरन्तु) भर देवें। (सः) वह (विभावसु) ज्ञान धन वाला (सुप्रतीकः) शोभन सुख वाला (त्वम्) तू (नः) हमारे लिए (शिवः) कल्याण को प्राप्त कराने वाला (भव) हो।

व्रीहयश्च मे यवाश्च मे माषाःश्च मे तिलाश्च मे मुद्गाश्च मे खलवाश्च मे प्रियङ्गवश्च मे ऽवश्च मे श्यामाकाश्च मे नीवाराश्च मे गोधूमाश्च मे मसूराश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।। यजु. 18.12

अर्थ-(व्रीहयश्च में) मेरा भोजन चावल होवे। (यवाश्य में) मेरा भोजन जौ होवे (माषाश्च में) मेरा भोजन उड़द से बना हुआ होवे। (तिलाश्च में) मैं तिलों को खाऊं। (मुद्गाश्च में) मूंग मेरे भोजन का अंग होवे। (खल्वाश्च में) मैं चनों से निर्मित भोजन ग्रहण करूं। (प्रियङ्गवः च में) कंगु मेरा भोजन होवे। (अणवश्च में) सूक्ष्म चावल मेरे भोजन का अंग बने। (श्यामाकाः च में) कोदों को मैं अपनाऊं। (नीवाराश्च में) मैं अरण्य तृणधानों को सेवन करूं। (गोधूमाश्च में) मैं गेहूँ को भोजन के काम में लूं (मसूराः च में) मैं मसूर का सेवन करूं। (यज्ञेन कल्पन्ताम्) प्रभु सम्पर्क से मेरे ये सब भोजन मुझे सामर्थ्य सम्पन्न बनाएं।

इसी विषय को बढ़ाते हुए कहा गया है-

पयसो रूपं यद्य वां दध्नो रूपं कर्कन्धूनि।

सोमस्य रूपं वाजिनꣳ सौम्यस रूपमामिक्षा।। यजु. 19.23

अर्थ-(यत् यवाः) ये जो जौ हैं वे (पयसः रूपम्) दूध का स्थानापन्न भोजन है। (दध्नः रूपम्) दही का स्थानापन्न भोजन (कर्कन्धूनि) स्थूल बदरीफल है। (सोमस्यरूपम्) सोम का स्थानापन्न भोजन (वाजिनं) दूध का पतला भाग है। (सोमस्य) सोम के बने हुए भोजन का स्थानापन्न (अमिक्षा) फटे हुए दूध का घन भाग है जिसमें दही मिलाया गया है।

अथर्ववेद में भी शाकाहार का समर्थन हुआ है।

सं सिञ्चामि गवां क्षीरं समाज्येन रसम्।

सं सिक्ता अस्माकं वीरा ध्रुवा गावो मयि गोपतौ।।

अथर्व. 2.26.4

अर्थ-मैं (गवां क्षीरम्) गाय के दूध को (सम सिंचामि) सम्यक् ग्रहण करता हूँ, गो दूध का सेवन करता हूँ। (आज्येन) घृत के द्वारा (बलम्) शरीर में बल को तथा (रसम्) वाणी में रस को (सम्) सम्यक् सिक्त करता हूँ। (अस्माकम्) हमारे (वीराः) सन्तान भी (संसिक्तां) गो दूध और घी से सम्यक् सिक्त होते हैं इसलिए (मयि

(शेष पृष्ठ 7 पर)

सम्पादकीय

अमर बलिदानी-चन्द्रशेखर आजाद

जो भरा नहीं है भावों से, जिसमें बहती रसधार नहीं।
वह हृदय नहीं है पत्थर है जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की ये पंक्तियां हमारे देश के क्रान्तिकारियों के जीवन पर चरितार्थ होती हैं। उन क्रान्तिकारियों को अपनी मातृभूमि से इतना प्यार था कि उन्होंने हंसते-हंसते फांसी के फंदों को चूम लिया। वो क्रान्तिकारी अपने देश को आजाद देखना चाहते थे, विदेशियों की दासता से मुक्त करना चाहते थे। क्योंकि उन्हें पता था कि विदेशी राज्य के कारण हम उन्नति नहीं कर सकते। इन क्रान्तिकारियों ने अपने सुखों की चिन्ता किए बिना अपना सर्वस्व देश की आजादी के लिए समर्पित कर दिया।

हमारे देश को अंग्रेजों की गुलामी से आजाद कराने में अनेकों शूरवीरों तथा क्रान्तिकारियों का योगदान है जिन्होंने अपना तन-मन-धन और सर्वस्व इस देश की आजादी के लिए न्यौछावर कर दिया। अपने निजी सुखों को त्यागकर राष्ट्रहित के लिए अपने आपको समर्पित कर दिया। ऐसे शूरवीरों, क्रान्तिवीरों के कारण हमारा देश आजाद हुआ। ऐसे ही क्रान्तिकारियों में अमर शहीद चन्द्रशेखर का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। चन्द्रशेखर आजाद के नाम से अंग्रेज अधिकारी ड़र जाते थे। चन्द्रशेखर आजाद का जन्म वर्तमान मध्य प्रदेश के झाबुआ जिले के भाबरा ग्राम में 23 जुलाई 1906 को हुआ था। उनके पिता का नाम पण्ड़ित सीताराम तिवारी तथा माता का नाम श्रीमती जगरानी देवी था। चन्द्रशेखर आजाद का प्रारम्भिक जीवन आदिवासी बाहुल्य क्षेत्र भाबरा गांव में बीता। इसलिए आजाद ने बचपन में भील बालकों के साथ खूब धनुष बाण चलाए। इस प्रकार निशानेबाजी उन्होंने बचपन में ही सीख ली थी। चन्द्रशेखर आजाद बचपन से ही वीर और साहसी थे। वे हमेशा सच बोलते थे। एक बार वे साधु के वेश में घूम रहे थे तो पुलिस वालों ने उन्हें पकड़ लिया और उनसे पूछताछ की जाने लगी। पुलिस वालों ने उनसे पूछा कि क्या तुम आजाद हो? इस पर चन्द्रशेखर आजाद ने बड़ी चतुराई से सच बोला कि अरे हम आजाद नहीं हैं तो क्या हैं? सभी साधु आजाद होते हैं। हम भी आजाद हैं।

इतना सच बोलने के बाद भी वे पुलिस के चंगुल से निकल गए। उन्होंने जीवन में एक ही सबक पढ़ा था कि गुलामी जिन्दगी की सबसे बड़ी बदकिस्मती है। जब उन्होंने क्रान्तिकारी जीवन में कदम रखा तो इनका साहस भरा कार्य काकोरी षड्यन्त्र था। 9 अगस्त 1925 को सहारनपुर से लखनऊ जाने वाली गाड़ी को काकोरी के पास रोक कर अंग्रेजी खजाना लूटने के पश्चात नौ दो ग्यारह हो गए थे। चाहे कइयों को बाद में पुलिस ने पकड़ कर फांसी की सजा दी थी पर आजाद आखिरी समय तक आजाद ही रहे थे। चन्द्रशेखर आजाद देशभक्ति के गीतों को बड़े चाव से सुना करते थे। चन्द्रशेखर आजाद आजीवन अविवाहित रहे। वे कहा करते थे कि अपने सिर पर मौत का कफन बांध कर चलने वाला व्यक्ति कभी शादी के बन्धन में बंधने की कल्पना भी नहीं कर सकता। आजाद ही नहीं उनके दल का हर एक सदस्य अपने घर बार को तिलांजलि देकर दल में शामिल हुआ था। जो व्यक्ति गुलामी की जंजीरों को तोड़ने का स्वप्न लेकर आया हो वह वैवाहिक सुख की कल्पना भी कैसे कर सकता है। एक बार उनके दल के किसी सदस्य ने आजाद से पूछ लिया कि वे कैसी पत्नी की इच्छा करते हैं तो आजाद ने बड़े ही सहज भाव से उत्तर दिया कि मेरे अनुसार मेरे लायक लड़की हिन्दुस्तान में तो क्या, सारी दुनिया में कहीं नहीं मिलेगी क्योंकि मैं ऐसी पत्नी चाहता हूं जो एक कन्धे पर राईफल और दूसरे कन्धे पर कारतूसों से भरा हुआ बोरा उठाकर पहाड़ से पहाड़ घूमती रहे और इस तरह आजादी के लिए अपनी जान दे दे।

27 फरवरी 1931 को वह महान् दिन था जिस दिन आजाद ने अपने जीवन से आजादी पाई थी। वे अक्सर कहा करते थे कि किसी मां ने अभी वो लाल पैदा ही नहीं किया जो आजाद को जीवित पकड़ सके। उन्होंने कसम खाई थी कि वे कभी पुलिस के हाथों जिंदा गिरफ्तार नहीं होंगे। इसी कसम को निभाते हुए वे शहीद हुए थे। प्रयाग के अलफ्रेड पार्क में वे अपने साथी के साथ बैठकर कोई महत्वपूर्ण चर्चा कर रहे थे कि उनके एक साथी ने विश्वासघात करते हुए पुलिस को सूचना दे दी। पुलिस ने चारों ओर से घेर लिया। आजाद ने बड़ी वीरता से सामना किया। दोनों ओर से गोलियों की बौछार होने लगी लेकिन आजाद कब हार मानने वाले थे। उन्होंने अपनी पिस्तौल से निशाना साधकर सी. आई. डी. के सुपरिंटेंडैंट की भुजा पर गोली मारकर उसे नकारा कर दिया। इसी प्रकार एक इंस्पैक्टर का जबड़ा भी उड़ा दिया।

अचानक उन्हें ज्ञात हुआ कि उनके पिस्तौल में एक ही गोली बची है। वे अजीब संकट में फंस गए। उन्हें अपनी कसम बार-बार याद आने लगी कि जिन्दा रहते हुए पुलिस के आदमी मुझे कभी हाथ नहीं लगाएंगे। उन्होंने अपनी कनपटी पर पिस्तौल की नाल लगाकर घोड़ा दबा दिया और आत्म बलिदान का गौरव प्राप्त किया। उनके शव को देखकर भी पुलिस वालों को यकीन नहीं हो रहा था कि वे मर गए हैं। आजाद से भयभीत पुलिस वाले उनके शव को गोलियां मारते रहे। ऐसे निर्भीक और तेजस्वी थे अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद जिन्होंने मरते दम तक अपनी कसमों को निभाया और जीते जी अंग्रेजों के हाथ नहीं आए।

आज के युवा वर्ग को ऐसे क्रान्तिकारियों के जीवन से शिक्षा लेकर निर्भीक, ओजस्वी और बलवान बनना चाहिए। नशे के कारण जो अपनी जवानी को बर्बाद कर देते हैं वे कभी भी जीवन में उन्नति नहीं कर सकते। अपने यौवन को बर्बाद न करके उसे राष्ट्रहित के कार्य में लगाना चाहिए। चन्द्रशेखर आजाद जैसे कितने ही क्रान्किारियों ने अपनी भरी जवानी के सुखों को छोड़कर इस मार्ग को अपनाया। वे चाहते तो सुख का जीवन व्यतीत कर सकते थे परन्तु उनका लक्ष्य अपने देश को स्वतन्त्र देखना था। इसके लिए उन्होंने त्याग के रास्ते को अपनाया। अपने घर-बार और परिवार को त्याग करके उन्होंने अनेकों कष्ट सहे, कई-कई दिनों तक भूखे रहे परन्तु अपने लक्ष्य से एक क्षण के लिए भी विचलित नहीं हुए। इसलिए मैं आज के युवा वर्ग के लिए यही सन्देश देना चाहता हूं कि वे नशे जैसी बुरी आदतों से दूर रहकर अपनी जवानी का, अपनी ऊर्जा का प्रयोग राष्ट्रहित के कार्यों के लिए करें। अपने यौवन को नशे के प्रवाह में न बहने दें और कवि की इन पक्तियों को हमेशा याद रखें-

जवानों जवानी में चलना जरा संभल कर
मिलती नहीं है दोबारा निकल कर।
कठिन यह जवानी की मंजिल है दोस्तों,
लड़खड़ा जाए कुछ दूर चल कर।
विषय रूपी रहजन अनेकों मिलेंगे,
खबरदार कोइ ले न जाए छल कर।
जिन्दगी न दिल है लुटाने की वस्तु,
लुटाया जिसने रहा हाथ मल कर।

प्रेम भारद्वाज
संपादक एवं सभा महामन्त्री

वृद्धावस्था आज के सामाजिक परिप्रेक्ष्य में

ले.-आचार्य रमेश 'विद्यावाचस्पति' धर्माचार्य-डी.ए.वी. मॉडल स्कूल, सैक्टर 15-ए, चण्डीगढ़

सभी प्राणियों में मानव जीवन सर्वश्रेष्ठ व अनमोल है। वैदिक परम्परा में यह मानव जीवन मुख्यत: चार आश्रमों में विभक्त है-ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं संन्यास। वृद्धावस्था के अन्तर्गत वानप्रस्थ एवं संन्यास क्रमश: दोनों आते हैं। प्रारंभिक जीवन ब्रह्मचर्य का है, जिसकी आयु सीमा जन्म से 25 वर्ष तक की है। इसी तरह गृहस्थ की आयु सीमा 26 से 50 वर्ष तक है। तब वानप्रस्थ की आयु सीमा 51 से 75 तथा संन्यास के लिए 76 से मृत्युपर्यन्त है। ज्ञातव्य है कि जिसे हम वृद्धावस्था कहते हैं इसके अन्तर्गत क्रमश: वानप्रस्थ एवं संन्यास दोनों ही आश्रम सम्मिलित हैं। मेरा प्रतिपाद्य विषय 'आश्रम-व्यवस्था नहीं है बल्कि 'वृद्धावस्था' है। कुछ वैराग्य जनों को छोड़कर जो आश्रम धर्म का पालन करने में असमर्थ हैं, ऐसे वृद्धजनों का जीवन कैसे व्यतीत हो सके? मुख्य रूप से इस लेख में इसी बिन्दु का दिग्दर्शन है। घर-गृहस्थी, बाल-बच्चे व परिवार के बीच रहते हुए वृद्धावस्था का जीवन सानन्दमय हो, जीवन भाररूप न हो, क्या यह संभव है? जी हाँ, बिल्कुल संभव है। विकल्प से चाहें तो आश्रम धर्म का पालन करें अथवा घर-गृहस्थी, बाल-बच्चे व परिवार के बीच रहते हुए ही वृद्धावस्था का सम्पूर्ण जीवन व्यतीत कर सकते हैं। इस सन्दर्भ में ऋग्वेद का एक वेदमंत्र उपस्थित है-

इहैव स्तं मा वि यौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम्।

क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्व गृहे।। ऋग्.

शब्दार्थ-हे वर और वधू! (इह) यहाँ (एव) ही (स्तम्) रहो (मा) मत (वि यौष्टम्) वियुक्त हो, (विश्वम्) पूर्ण (आयु:) आयु को (व्यश्नुतम्) प्राप्त करो, (स्वे) अपने (गृहे) घर में (पुत्रै:) पुत्रों (नप्तृभि:) पोतों और नातियों के साथ (मोदमानौ) प्रसन्न होते हुए (क्रीडन्तौ) खेलते हुए रहो।

उपर्युक्त वेदमंत्र से पाणिग्रहण संस्कार (विवाह-संस्कार) के समय आचार्य द्वारा वर-वधू को आशीर्वाद दिया जाता है और नवदम्पति का भावी जीवन अत्यंत मंगलमय हो, प्रभु से इसकी मंगलकामना की जाती है।

उपर्युक्त मंत्र में वर-वधू को कहीं बिछुड़ने का संकेत नहीं है, बल्कि सम्पूर्ण जीवन एक होकर बने रहने का उपदेश है। तब प्रश्न है कि वह वृद्धावस्था का जीवन कैसा हो? आजकल परिवार व समाज में यह देखने को मिल रहा है कि वृद्धजनों का जीवन बहुत ही उपेक्षित है। उन्हें घर-परिवार के बीच वह सम्मान नहीं मिल पा रहा है जिसके वे अधिकारी हैं। आज के इस दूषित वातावरण में वृद्धजन बूढ़े माता-पिता, दादा-दादी आदि वृद्धाश्रम में रहने के लिए मजबूर हो गए हैं। जरा सोचिए, मनु महाराज के इस श्लोक का कितना भयंकर अपमान है। मनु का तो उपदेश है-

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविन:।

चत्वारि तस्य वर्धन्ते, आयुर्विद्यायशोबलम्।।

अर्थात् जो व्यक्ति अपने से बड़ों को नित्य नमस्ते और उनकी सेवा करते हैं, उन्हें आयु, विद्या, यश और बल-ये चार चीजें स्वाभाविक रूप से प्राप्त होती हैं।

अत: सभी नवयुवक व नवयुवतियों तथा गृहस्थी जनों से आग्रह व विनम्र निवेदन भी है कि आप अपने वृद्ध माता-पिता, दादा-दादी के साथ ऐसा व्यवहार न करें जिससे उन्हें समाज में अपमानित होना पड़े। बल्कि आपके लिए यही उपदेश है-मातृ-पितृ देवो भव। माता-पिता व अन्य वृद्धजन सभी देवता तुल्य है। इन्हीं की कृपा व आशीर्वाद से संतति भौतिक व आध्यात्मिक सभी सुखों को प्राप्त कर लेती है। अत: संतति का परम व नैतिक कर्तव्य बन जाता है कि वे अपने वृद्धजनों का सही सम्मान करें व उनके मार्गदर्शन में आगे बढ़ते जाएं। क्योंकि वे वृद्धजन आयु, ज्ञान व अनुभव में आप से बड़े हैं। उनके मार्ग दर्शन में आगे बढ़ने से जीवन की बहुत सारी उलझनें स्वयमेव समाप्त हो जाती हैं। हाँ, थोड़ा धैर्य व साहस रखने की आवश्यकता है और यह भी समझना होगा कि हम माता-पिता के ऋणी हैं। उस कर्ज़ को कैसे पूरा कर सकते हैं? मनुस्मृति में तो यह कहा गया है कि-

यं माता पितरौ क्लेशं सहेते सम्भवे नृणाम्।

न तस्य निष्कृति: शक्या कर्तुं वर्षशतैरपि।।

अर्थात् जो माता-पिता अपने बच्चों के जन्म के समय कष्ट सहन करते हैं उन्हें सौ वर्ष में भी हम उस ऋण (कर्ज़) को पूरा नहीं कर सकते हैं।

माना कि हम श्रवण कुमार नहीं बन सकते तथापि हमारा प्रयास तो हो ही सकता है कि हम उनके दिल को न दुखायें-उनकी यथासंभव व यथाशक्ति सेवा कर सकें। शेष बातें ईश्वर को समर्पित कर दें, तब सब ठीक रहेगा। ऐसे लोगों पर ईश्वर की कृपा भी बनी रहती है। अब मैं वृद्धावस्था प्राप्त अथवा सेवानिवृत्त जनों से निवेदन करते हुए इन पंक्तियों के साथ अपनी शुभकामनाएं भेंट करना चाहूँगा-

अब तक का जीवन आपका शानदार रहा है और आगे भी रहेगा।

बस, आप अपनी हिम्मत न हारें, तभी आपकी शक्ति, साहस व ज्ञान साथ रहेगा। पाठकवृन्द! शक्ति, साहस व ज्ञान को एकत्रित कर इन तीनों को पुन: एक सही दिशा में ले जाना ही सफलता का मूल मंत्र है, जो ईश्वर की कृपा से आपको प्राप्त है। गणित में हमें सिखाया जाता है-जोड़, घटाव, गुणा और अंत में भाग देना। बस, सम्पूर्ण जीवन भी मानो एक गणित ही है। इसी गणितीय सूत्र को पूरा करने में सम्पूर्ण जीवन बीत जाता है। जरा विचारिए-जीवन की प्रारंभिक अवस्था (ब्रह्मचर्य)-जोड़ का है, जिसमें ज्ञान, शक्ति व धन का संचय करना होता है। दूसरी अवस्था गृहस्थ-घटाव का है, जिसमें संचित ज्ञान, शक्ति व धन का सदुपयोग (खर्च) करना होता है। तीसरी अवस्था वानप्रस्थ-जीवन को गुणीभूत करना है अर्थात् जीवन में अधिक चमक उत्पन्न करनी होती है और चौथी अवस्था-संन्यास का है, जिसे प्राप्त कर सांसारिक जीवन पूर्ण हो जाता है और वह पारलौकिक जीवन का राही बन जाता है। इस अवस्था में प्राप्त धन-सम्पदा व मान-सम्मान-इन सभी को 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की पवित्र जलधारा में बराबर रूप से बिखेर देना होता है, जिससे समाज की प्रत्येक इकाई को लाभ मिल सके। ऐसे व्यक्तित्व के धनी लोग समाज में पूजनीय व सम्माननीय हैं। अत: इस तरह गणितीय सूत्र में जीवन को व्यतीत करना ही सार्थक जीवन कहलाता है।

वृद्धावस्था आज के सामाजिक परिप्रेक्ष्य में कैसे अपनी पहचान बनाये रखे? यह प्रश्न जनमानस में मुँहबाय खड़ा है। बशर्ते वृद्धजन पहले स्वयं की पहचान कर लें। जब वृद्धजन अपनी अवस्था में आकर आत्मबोध कर लेगा तब दुनिया की कोई शक्ति उसे हिला नहीं सकती। वह सर्वत्र अपने संचित ज्ञान, धन व शक्ति द्वारा परिवार, समाज के बीच अपनी चमक को गुणीभूत करते हुए अपने मान सम्मान को बनाए रखे। अत: वृद्धावस्था प्राप्त जनों को किसी भी प्रकार से निराश व हताश होने की आवश्यकता नहीं है। उनके जीवन को उत्कर्ष बनाये रखने के लिए बहुत ही सुन्दर एवं सारगर्भित वेदोपदेश है-

अमाजुरश्चिदवितरापमस्य चित्।

अन्धस्य चिन्नासत्या कृशस्य चिद्युवामिदाहुर्भिषजा रुतस्य चित्।।

ऋग्वेद 10.39.03।

शब्दार्थ-(नासत्या) कभी भी परस्पर असत्य, मिथ्या भाषण और अनुचित आचरण न करने वाले (युवम्) तुम दोनों, अर्थात् पति-पत्नी (अमाजुर:) घर में वृद्धावस्था पर्यन्त सहचारी बनकर (भग: भवथ:) सर्वानन्दयुक्त जीवन व्यतीत करो-किन्तु कुछ आवश्यक कर्तव्यों का निर्वाह करते हुए, यथा-(अनाशोश्चित्) भूखे को अन्न दो, (अपमस्यचित्) निकृष्ट जघन्य दीनजनों को भी सहारा दो, (अन्धस्य च) नेत्रहीन की कठिनाई का भी समाधान करो, (कृशस्यचित्) दुर्बल और अशक्त के भी (अवितारा भवथ:) रक्षक बनो, (युवाम्) तुम दोनों पति-पत्नी (रुतस्यचित्) रोग-पीड़ित को (भिषजा) चिकित्सा द्वारा (अवितारा) कष्ट-निवारक (आहु:) कहते हैं।

वैदिक शिक्षा में वृद्धावस्था में वृद्धों के पाँच आवश्यक कर्त्तव्यों की चर्चा:-

उपर्युक्त मंत्र के शब्दार्थ से वृद्धजनों के लिए सामाजिक परिप्रेक्ष्य में पाँच तरह के कार्य करणीय हैं। जैसे:

1. भूखे को अन्न देना।
2. दीनहीन को सहारा देना।
3. नेत्रहीन की कठिनाई का समाधान करना।
4. दुर्बल व कमजोर का भी रक्षक होना, तथा

(शेष पृष्ठ 7 पर)

पुण्य के आवरण में पाखण्ड : गीता की सामाजिक दृष्टि

ले.-डॉ. जितेन्द्र कुमार सह-आचार्य, संस्कृत विभाग राजकीय महाविद्यालय बयाना, भरतपुर (राज.)

वस्तुत संसार में देखने में आता है कि अच्छे मनुष्य अधिक हैं और वे अनेकविध अच्छाइयों को भी समय-समय पर यथाशक्ति करते रहते हैं। फिर संसार में अच्छाइयों की भरमार होते हुए भी बुराइयाँ कम होने का नाम क्यों नहीं ले रहीं हैं? प्रत्येक व्यक्ति अथवा समूह परस्पर वातालाप के अवसर पर शिकायत करता हुआ, कोसता हुआ, व्यवस्थाओं में दोष दिखाता हुआ, दूषित वृत्तियों, प्रवृत्तियों एवं प्रकृतियों की ओर ध्यानाकर्षित करता हुआ दिखायी देता है। इसके पीछे कारण का पता लगाने पर समझ में यह आता है कि व्यक्ति अथवा समुदाय या संगठन धर्म के, पुण्य के जो कार्य कर रहे हैं, वे बाह्य कर्मकाण्ड तक ही सीमित दिखायी पड़ते हैं। यदि ऐसा नहीं है तो आज से पचास वर्ष पूर्व न इतने धार्मिक आयोजन होते थे, न इतना दान, पुण्य होता था, न सत्संग, संकीर्तन ही था, न विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय ही थे, न मन्दिर, मस्जिद, चर्च, गुरुद्वारे और धार्मिक संस्थायें, मठ, महन्त, मठाधीश, सन्त, बापू, आचार्य, महाराज जी, श्री 108 अनन्तगुण विभूषित, श्री श्री 1008 परम पूज्य पीठाधीश्वर आदि अनेक उपाधियों से अलंकृत उपदेष्टाओं का जो जाल वर्तमान में दिखलाई पड़ता है वह इतनी अधिक मात्रा में पहले विद्यमान नहीं था। फिर भी आज बुराइयाँ घटने का नाम नहीं ले रही हैं, बल्कि घटने की बजाय बढ़ी हैं। ऐसा बातचीत के अवसर पर अधिकांश लोग अनुभव करते हैं तथा प्रकट करने से बचते भी नहीं है। तब प्रश्न उठता है कि इतने धार्मिक संगठन, समारोह, आयोजन, उपदेशक, विद्वान्, महात्माओं की उपस्थिति में और इनके आयोजनों के अवसरों पर होने वाले भक्तों एवं अनुयायियों की हजारों, लाखों की भीड़ आने पर तो समाज सुधरा-सुधरा सा सुनाई पड़ना चाहिये और दिखायी भी देना चाहिये, परन्तु व्यक्ति एवं समाज में सुधार की और अधिक आवश्यकता दिखायी देती है।

कुछ लोग इसका उत्तर यह देते हैं कि पहले की तुलना में जनसंख्या भी बढ़ी है और उस अनुपात में धार्मिक अनुष्ठान भी बढ़े हुए दिखायी पड़ते हैं। कुछ लोग कहते हैं कि आज विज्ञापन का युग है, इसलिए प्रचार के माध्यम अधिक होने के कारण अब लोगों को पता भी चल जाता है कि कुछ धर्म का कार्य हो रहा है। कुछ लोग कहेंगे कि आज प्रत्येक व्यक्ति प्रदर्शन भी चाहता है, इसलिये अब बहुत कुछ करता हुआ अथवा होता हुआ दिख रहा है। परन्तु मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है कि व्यक्ति अथवा समाज धर्म तो कर रहा है, पुण्य भी कर रहा है, किन्तु अधर्म और पाप को छोड़ नहीं पा रहा है। सबसे बड़ी विडम्बना तो यह है कि वह सोचता है कि पुण्य और धर्म के बाह्य कृत्यों को, कर्मकाण्डों को, अनुष्ठानों को करके अधर्म को ढ़का जा सकता है। यह प्रवृत्ति प्रकृति बनती जा रही है। इससे वह मुक्त नहीं हो पा रहा है। अनेक बार वह गणितीय जोड़-घटाव भी करने लगता है कि मैंने दस पुण्य किये हैं तो एकाध पाप तो पुण्य में छिप ही जायेगा या वह पुण्य में से घट जायेगा। तब मुझे पाप का फल नहीं मिलेगा या पाप नष्ट हो जायेगा अथवा आजकल एक विचार और चल पड़ा है कि निषेधात्मक (नेगेटिविटी) पर क्यों ध्यान देते हो? आप गुणों को देखो, अवगुणों पर निगाह क्यों डालते हो? इस कारण आदमी ने अपने अवगुणों को भी देखना बन्द कर दिया और दूसरों के गुणों को। ऐसी ही बहुत सारी बातों से व्यक्ति और समाज अपने को आवरण में रखकर ही प्रकट करता दिखायी देता है।

इसी धर्म-कर्म को ध्यान में रखकर गीता के सत्रहवें अध्याय में विचार किया गया है। पिछले सालों की घटना है जब प्रयाग कुम्भ मेले के अवसर पर करोड़ों की संख्या में भक्तों और श्रद्धालुओं ने कुछ विशिष्ट दिनों में (मकर संक्रान्ति, मौनी अमावस्या, बसन्त पंचमी) पहुँच कर गंगा, यमुना और सरस्वती के (सरस्वती को अन्त:सलिला के रूप में स्वीकार करते हए) संगम पर पापों से छुटकारा पाने के उद्देश्य से शाही स्नान किया तथा पुण्यार्जन भी किया। ऐसी दृढ़ मान्यता और धारणा के वशीभूत होकर ही लोगों के द्वारा इन दिनों एवं मुहूर्त्त में स्नान किया गया है।

दुर्भाग्य से एवं सरकार की अव्यवस्थाओं के कारण तथा इलाहाबाद रेलवे स्टेशन के प्लेटफार्म पर श्रद्धालुओं की अधिक भीड़ होने से एक भगदड़ की दुर्घटना में 36 लोगों की मृत्यु हो गई और 39 लोग घायल हो गये तथा हजारों की संख्या में लोग खोने के कारण अपने परिवार एवं प्रियजन से पृथक् हो गये।

सम्पूर्ण गीता में एक स्थान पर भी गंगा स्नान अथवा कुम्भ के अवसर पर संगम में स्नान करने से पाप नष्ट हो जाते हैं अथवा पुण्य की प्राप्ति होती है, ऐसा लिखा हुआ दिखायी नहीं दिया है। अपितु इसके विपरीत जो शास्त्र-विधि को छोड़कर श्रद्धा से युक्त होकर उक्त प्रकार के कृत्य करते हैं, वह उनकी कौन सी पूजा है? सात्विकी, राजसी और तामसी? यह प्रश्न करते हुए सत्रहवें अध्याय को प्रारम्भ किया गया है।

उक्त अध्याय में 28 श्लोक है। इसमें यज्ञ, दान और तप श्रद्धा से तथा शास्त्र-विधि को ध्यान में रखकर ही किये जाने चाहिये, इसका सकारण विवेचन है। आचार्य शंकर इस पर भाष्य करते हुए लिखते हैं कि जो कोई साधारण मनुष्य, शास्त्र-विधि को छोड़कर, शास्त्र की आज्ञा को अर्थात् श्रुति-स्मृति आदि शास्त्रों के विधान को छोड़कर श्रद्धा से अर्थात् आस्तिक्य बुद्धि से युक्त होकर देवादि का पूजन करते हैं। यहाँ "ये शास्त्रविधिमुत्सृज्य यजन्ते श्रद्धयान्विता:" इस कथन से श्रुति रूप या स्मृति रूप किसी भी शास्त्र के विधान को न जानकर और न मानकर केवल वृद्ध व्यवहार को आदर्श मानकर, जो श्रद्धापूर्वक देवादि का पूजन करते हैं, वे ही मनुष्य ग्रहण किये गये हैं। किन्तु जो मनुष्य कुछ शास्त्र-विधि को जानते हुए भी उसको छोड़कर अविधिपूर्वक देवादि का पूजन करते हैं वे "ये शास्त्रविधिमुत्सृज्य यजन्ते" इस कथन से ग्रहण नहीं किये जा सकते हैं।

अर्जुन प्रश्न करते हैं कि हे कृष्ण! इस प्रकार के मनुष्यों की कौन सी निष्ठा है? सात्विक है, राजस है अथवा तामस है? अर्थात् उनकी स्थिति सात्विकी है या राजसी है या तामसी है? उनका यजन किस प्रकार का है?

आद्य शंकाराचार्य उक्त अर्जुन के प्रश्न को "यह साधारण मनुष्यों के विषय में है, अत: इसका उत्तर बिना विभाग किये देना उचित नहीं" ऐसा कहकर भगवान कृष्ण ने उसका उत्तर दिया, इसको प्रदर्शित किया गया है।

जिस निष्ठा के विषय में तू पूछता है, मनुष्यों की वह स्वभावजन्य श्रद्धा अर्थात् जन्मान्तर में किये हुए धर्म-अधर्म आदि के जो संस्कार मृत्यु के समय में प्रकट हुआ करते हैं, उनके समुदाय का नाम स्वभाव है, उससे उत्पन्न हुई श्रद्धा तीन प्रकार की होती है। सत्त्वगुण से उत्पन्न हुई देवपूजा आदि विषयक श्रद्धा 'सात्विकी' है, रजोगुण से उत्पन्न हुई यक्ष-राक्षसादि की पूजा विषयक श्रद्धा 'राजसी' है और तमोगुण से उत्पन्न हुई प्रेत-पिशाचादि की पूजा विषयक श्रद्धा 'तामसी' है। ऐसी तीन प्रकार की श्रद्धा होती है। उस आगे कही जाने वाली तीन प्रकार की श्रद्धा को तू सुन।।

हे भारत! सभी प्राणियों की श्रद्धा उनके भिन्न-भिन्न संस्कारों से युक्त अन्त:करण के अनुरूप होती है। यदि ऐसा है तो इससे क्या होगा? इस पर कहते हैं-यह पुरुष अर्थात् संसारी जीव श्रद्धामय है, क्योंकि जो जिस श्रद्धा वाला है अर्थात् जिस जीव की जैसी श्रद्धा है, वह स्वयं भी वही है अर्थात् उस श्रद्धा के अनुरूप ही है। इसलिए कार्यरूप चिन्ह से अर्थात् (उन श्रद्धाओं के कारण होने वाली) देवादि की पूजा से, सात्त्विक आदि निष्ठाओं का अनुमान या ज्ञान कर लेना चाहिये।

सात्त्विक निष्ठा वाले पुरुष देवों का पूजन करते हैं, राजसी पुरुष यक्ष और राक्षसों का पूजन करते हैं तथा अन्य जो तामसी मनुष्य हैं वे प्रेतों और सप्त-मातृकादि भूतगणों का पूजन किया करते हैं।

(क्रमश:)

महर्षि जी के अन्तिम समय का संक्षिप्त परिचय

ले.-पं. खुशहाल चन्द्र आर्य C/o गोबिन्द राय आर्य एण्ड सन्ज़ १८० महात्मा गान्धी रोड़, (दो तल्ला) कोलकत्ता-700007

महर्षि जी को महाराज जोधपुर यशवन्त सिंह का निमन्त्रण मिला। उन्होंने स्वीकार कर लिया। जोधपुर जाने के पूर्व महर्षि जी के भक्तों ने उनसे विनम्र निवेदन किया कि वे वहाँ न जायें। कारण जोधपुर नरेश वेश्यागामी है। आप सत्य कहने से नहीं हटेंगे, आपका वहाँ जाना निरापद नहीं है।

महर्षि जी ने उनसे कहा कि चाहे मेरी अंगुलियों को बत्तियाँ बनाकर उन्हें जला दिया जाये पर दयानन्द सत्य कहने से कभी भी नहीं चूकता। मैं अवश्य ही जोधपुर जाऊँगा ज्येष्ठ बदी-८ संवत् १८४० (सन् 1883 ई.) को जोधपुर चले गये। वहाँ राज्य की ओर से उनका भव्य स्वागत् किया गया और उन्हें मियाँ फैजुल्ला खाँ के उद्यान में ठहरा दिया गया स्वामी जी की पूर्ण व्यवस्था जोधपुर राज्य की ओर से की गई। उस उद्यान का विस्तृत-आंगन था। उसी में महर्षि जी के प्रवचनों की व्यवस्था कर दी गई। प्रवचन सभा में राज्य के छोटे-बड़े सभी अधिकारी भाग लेते थे।

प्रवचनों के पूर्व ही राजा राव तेजसिंह ने श्री चरणों में निवेदन किया कि महाराज की दैनिक चर्चा के सम्बन्ध में कुछ न कहें। महर्षि जी ने कहा कि मैं सत्य कहने से कभी नहीं डरता हूँ।

जोधपुर नरेश महाराजा यशवन्त सिंह जी स्वयं भी ऋषि जी के दर्शन करने उनके समीप जाया करते थे, जब उन्हें अवकाश न होता तो वे महर्षि जी के दर्शन करने के लिए उन्हें महल में सादर आमन्त्रित कर लेते।

एक दिन जब महर्षि जी महाराज यशवन्त सिंह के महल में पधारे तो नन्हीं-जान नाम की वैश्या वहाँ उपस्थित थी। महर्षि जी के आगमन की सूचना पाकर महाराजा ने वैश्या की डोली को संकेत से भिजवा दिया, फिर भी महर्षि जी की दृष्टि उस दृश्य पर पड़ गई। वार्त्ता के समय महर्षि जी ने महाराजा से प्रथम यही चर्चा की। महर्षि जी ने जोधपुराधीश से कहा कि आप स्वयं को पहचानने का प्रयास करें। प्रजा का पालन-पोषण और उनकी सुख-सुविधाओं का ध्यान रखना आपका प्रथम कर्त्तव्य है। यदि राजा ही अपने धर्म से पतित हो जाये तो प्रजा का क्या होगा? वैश्यागमन-निन्दनीय कर्म है। ऐसे आचरण से राजा के कुल को कलंक लगता है। प्रजा में उसकी साख गिर जाती है। आप जैसे प्रतिष्ठित राजा को ऐसा करना शोभा नहीं देता।

महाराजा ने महर्षि जी के उपदेश पर ध्यान दिया। उनके और नन्हीजान के सम्बन्ध में दूरी बनने लगी, परन्तु नन्ही जान ने इसे अपने अहं का प्रश्न बना लिया। राजा के समीप उसे अपनी प्रतिष्ठा धूल में मिलती दिखाई दी। राज दरबार में उसका बड़ा सम्मान था। उच्च-अधिकारी भी उसकी भौहों के टेढ़ेपन को सह नहीं पाते थे। इस घटना का परिणाम यह हुआ कि नन्हीजान ने अपने तिरस्कार का प्रतिशोध लेने का दृढ़ निश्चय कर लिया।

पूरे राजदरबार में नन्ही जान के प्रभाव से कोई अनभिज्ञ नहीं था। उसने अपना जाल फैलाना आरम्भ कर दिया, वह बौखला गई थी। धन का उसके पास कोई अभाव नहीं था। जो लोग महर्षि जी की सेवा में नियुक्त थे, उसने उनके ऊपर जाल फैंकना आरम्भ कर दिया। उसके जाल में सबसे पहले फँसा कल्लू कहार, यद्यपि वह निष्ठावान् सेवक था और श्रद्धा के साथ विनीत भाव से महर्षि जी की सेवा करता था।

27 सितम्बर सन् १८८३ ई० मिति आश्विन बदी चतुर्दशी संवत् १९४० की रात्री को धौल मित्र रसोईये से (जो शाहपुरा का रहने वाला था) महर्षि भी दूध पीकर सो गये। उसी रात्री को महर्षि जी के पेट में भयंकर दर्द आरम्भ हो गया। उल्टियाँ और दस्त शुरू हो गये। मन का चैन जाता रहा। पूरे शरीर में जलन उत्पन्न हो गई। राज्य की ओर से डॉ. अलीमर्दान खाँ को उन्हें देखने के लिए नियुक्त किया गया। उसके औषध उपचार से पीड़ा और बढ़ गई। महर्षि जी को रहस्य समझते देर न लगी। विषम विष उनके पूरे शरीर में समा गया था। यौगिक क्रियाओं से उसे निकाल देने का समय बीत चुका था। उनका पाचक धौल मित्र नन्ही जान के द्वारा दिए गये भारी प्रलोभन के पतन से गहरे गड्ढे में जा गिरा था। महर्षि जी के प्राण अब सुरक्षित नहीं थे। षड़यन्त्रकारी अपने षडयन्त्र में सफल हो गये थे। नन्ही जान के अतिरिक्त फैजुल्ला खाँ चक्रांकित सम्प्रदाय के लोग और जोधपर के कुछ राज पुरूष भी इस षड़यन्त्र में सम्मिलित हुऐ जान पड़ते थे। यही कारण था कि महर्षि जी का रोग अति गम्भीर हो जाने के बावजूद भी किसी को सूचना नहीं दी गई। निरन्तर रोग बढ़ता चला गया। परन्तु डॉ. अली मर्दान को नहीं बदला गया। महर्षि जी के संकेत करने पर भी उन्हें अन्यत्र चिकित्सा के लिए नहीं भेजा गया।

षड़यन्त्रकारियों ने ज्ञान के ऐसे सूर्य को बुझा देने का जघन्य अपराध किया था, जो अपनी ज्ञान-किरणों से अज्ञान के अँधेरे का अन्त कर देने के लिए कटिबद्ध था। स्वामी जी के अस्वस्थ हो जाने की सूचना "राजपूताना गजट" के माध्यम से पूरे देश में फैल गई। भक्त उनके दर्शनों के लिए जा लगे। उनकी बेचैनी और बढ़ी गई तो उन्होंने आबू पर्वत पर जाने की इच्छा व्यक्त की। महाराजा यशवन्त सिंह ने उनके जोधपुर से विदा होने की व्यवस्था की। उनके लिए विशेष पालकी का प्रबन्ध कर दिया गया। डॉ. सूरजमल महर्षि जी के साथ गये। महाराजा यशवन्त सिंह ने आबू पर्वत पर ठहरने की पूरी व्यवस्था तार द्वारा कर दी थी।

१६ अक्तूबर को जोधपुर से प्रस्थान कर रोहत व पाली होते हुए कार्तिक षष्ठी को महर्षि जी आबू पर्वत पहुँचे। डॉ. लक्ष्मण दास महर्षि जी के भक्त तथा श्रद्धालु थे। उन्होंने लगन से महर्षि जी का उपचार आरम्भ किया, महर्षि जी की वेदना कम हुई, परविधाता को यह सब स्वीकार नहीं था। डॉ. लक्ष्मण राजकीय सेवा में थे। उनके उच्चाधिकारियों ने उनकी इच्छा के विरुद्ध उन्हें अजमेर भेज दिया। नामी हकीम पीर अमाम अली ने सारा वृतान्त सुन कर कहा कि महर्षि जी को संखिया दिया गया है।

स्वास्थ्य लाभ न देखकर भक्त लोग महर्षि जी को अजमेर ले आए। 26 अक्तूबर सन् १८८३ मिति कार्तिक कृष्ण द्वादशी सम्वत् १८४० को महर्षि जी अजमेर पहुँच गये। उनके दर्शनार्थ भक्तों की भीड़ लग गई। डॉ. लक्ष्मण दास फिर श्री सेवा में लग गए परन्तु अब सभी औषधियाँ प्रभावहीन होती चली गई। महर्षि जी का स्वास्थ्य तेजी से गिरता जा रहा था। देश के विभिन्न भागों से महर्षि जी के दर्शनार्थ उनके भक्त अजमेर पहुँच रहे थे। लाहौर से लाला जीवन दास के साथ पण्ड़ित गुरुदत्त जी भी अजमेर पहुँचे।

दीपावली के दिन का सवेरा था। प्रसिद्ध डॉ. न्यूटन और प्रख्यात हकीम पीर जी स्वामी जी की सेवा में उपस्थित हुऐ। देखते ही दोनों ने कहा "इन्हें भयंकर विष दे दिया गया है" उन्हें आश्चर्य हो रहा था कि ऐसे विषम विष के पश्चात् भी यह सन्त अभी तक मृत्यु के साथ लड़ रहा है।

इस जन सेवी सुधारक सन्त के जीवन का अन्तिम प्रहर समीप आ रहा था। सूर्यास्त होने के पूर्व की आभा उनके मुखयमण्डल पर आ विराजमान हो गई थीं। उनकी वाणी खुल गई थी। वे अपने आसन पर विराजमान हो धीरे-धीरे भक्तों से वार्त्ताकर रहे थे।

सन्ध्या के उतरने से पूर्व महर्षि जी की आज्ञा से नाई को बुलवाया गया। उस वेदना में भी उन्होंने क्षौर क्रिया (हजामत आदि) कराई। भीगे तौलिए से सिर मुख पोछ लिया और सहारे से पलंग पर बैठ गये।

अपने शिष्य आत्मानन्द को बुलाया और कहा, हमारे पीछे की ओर आकर खड़े हो जाओं। फिर कहा आत्मानन्द क्या चाहते हो। उन्होंने कहा-ईश्वर से यही चाहते है आप स्वस्थ हो जाएं। महर्षि जी कुछ रूककर बोले यह देह है। इसका क्या अच्छा होगा "फिर हाथ बढ़ा कर आत्मानन्द के सिर पर हाथ फेरा तथा कहा "आनन्द से रहना।" फिर गोपाल गिरि सन्यासी को बुलाया और कहा "तुम क्या चाहते हो?" उसने भी वही उत्तर दिया। ऋषिवर ने कहा-"भई! अच्छी प्रकार से रहना।"

इस समय उनके चेहरे पर वेदना का कोई चिन्ह नहीं था। महर्षि जी ने तीन सौ रूपये व तीन दुशाले मंगा कर भीमसेन, आत्मानन्द व डॉ. लक्ष्मणदास को भेट किये, परन्तु उन्होंने लौटा दिये। सांझ उतरते ही उन्होंने भवन के ऊपर नीचे के सब द्वार खुलवा दिए। सब भक्तों को पीछे खड़े होने का आदेश दिया। उस दिन की स्थिति की जानकारी चाही। पंडिया रमालाल ने स्पष्ट किया कि आज कार्तिक कृष्ण पक्ष का अन्त है तथा शुक्ल पक्ष की आदि अमावस, दिन मंगलवार है। यह सुनकर बिनॉय कोठी की छत और दीवारों की ओर दृष्टि की, फिर वेदमन्त्रों का पाठ किया। अन्तिम क्षणों में महर्षि जी के दिव्य दर्शन से पण्डित-गुरूदत्त की नास्तिक वृत्ति जाती रही और वैदिक धर्मी बन गये।

वेदपाठ के पश्चात् कुछ ईश्वर उपासना की फिर भाषा में ईश्वर के गुणों का थोड़ा सा कथन कर अत्यन्त प्रसन्नता और हर्ष के साथ गायत्री मन्त्र का पाठ करने लगे। तत्पश्चात् हर्ष तथा प्रफुल्लित चित्त सहित कुछ

(शेष पृष्ठ 7 पर)

पृष्ठ 2 का शेष--सात्विक आहार करो-वेद

गोपतौ) मुझ गोरक्षक में (गाव:) गौएं (ध्रुवा:) ध्रुवता से रहती हैं।

आ हरामि गवां क्षीरमाहार्षं धान्यम् रसम्।

अह ता अस्माकं वीरा आ पत्नीरिदमस्तकम्।।

अथर्व. 2.26.5

अर्थ-मैं (गवां क्षीरम्) गौओं के दूध का (आहरामि) आहार करता हूँ तथा सदा (धान्यम् रसम्) अन्न रस का (आहर्षम्) आहार करने वाला होता हूँ। (अस्माकम् वीरा: आहता:) घर में हमें वीर सन्तानें प्राप्त हुई हैं। (पत्नी:) गृह पत्नी भी (इदं अस्ततम्) इस घर में (वीरा:) वीर ही (आहता:) आयी है।

इसी प्रकार ऋग्वेद भी शाकाहारी भोजन का समर्थन है।

स्वादोरभक्षि वयसः सुमेधाः स्वाध्यो वरिवोवित्तरस्य।

विश्वे यं देवा उत मर्त्यासो मधु ब्रुवन्तो अभि सञ्चरन्ति।।

ऋ. 8.48.1

अर्थ-मैं (वयस:) अन्न (अभक्षि) ग्रहण करूं। हम मनुष्य लोग अन्न खायें मांस नहीं। वह अन्न कैसा हो? जो (स्वादो:) स्वादिष्ट होवे, जो (वरिवो-वित्तरस्य) सत्कार योग्य होवे, जिसे देखते ही चित्त प्रसन्न हो जाए। पुन: (यम्) जिस अन्न को (विश्वे) सभी (देवा:) श्रेष्ठ (उत) तथा (मर्त्यास:) जन साधारण (मधु ब्रुवन्त:) मधुर कहते हैं व (अभि संचरन्ति) खाते हैं। वैसा अन्न ही हम सब खायें। खाने वाले कैसे होवें? (सुमेधा) सुमति तथा बुद्धिमान् होवे और (स्वाध्य:) सुकर्मा, स्वाध्यायशील तथा कर्म परायण होवें।

शं नो भव हृद आ पीत इन्दो पितेव सोम सूनवे सुशेवः।

सखेव सख्य उरूशंस धीरः प्र ण आयु जीवसे सोम तारी।।

ऋ 8.48.4

अर्थ-(इन्दो) हे आह्लाद दायक (सोम) हे सर्वश्रेष्ठ रस एवं शरीर पोषक अन्न (तू पीत:) इन जीवों के पीत व मुक्त होकर (न: हृदे) हमारे हृदय के लिए (शम् आभव) कल्याणकारी हो। यहां दृष्टान्त है-(पिता इव सूनवे) जैसे पुत्र को पिता सुख देता है, पुन: (सखा इव) मित्र मित्र को (सख्ये) मैत्री में रखकर (सुशेव) सुखी होता है वैसे ही (उरूशंस सोम) हे प्रशंसनीय सोम। (धीर:) तू धीर होकर (जीव से) जीवन हेतु (न: आयु:) हमारी आयु (प्रतारी) बढ़ा।

त्वं हि नस्तन्वः सोम गोपा गात्रे गात्रे निषसत्था नृचक्षाः।

यत्ते वयं प्रमिनाम व्रतानि स नो मृड सुषखा देवस्यः।।

ऋ. 8.48.8

अर्थ-(सोम देव) हे सर्वश्रेष्ठ तथा प्रशंसनीय रस एवं अन्न। (न:) हमारे (तन्व:) शरीर का (गोपा) रक्षक (त्वम् हि) तू ही है। (गात्रे-गात्रे) हर एक अंग में (निषसत्थ:) प्रविष्ठ हो, तू (नृषक्षा:) मानव शरीर का षोषण कर्ता है। (यद्) यद्यपि (वयम्) हम मनुष्य (ते व्रतानि) तेरे नियमों को (प्रमिनाम) भंग करते हैं तथापि (स:) वह तू। (वस्य:) श्रेष्ठ (न:) हमको (सुषखा) अच्छे मित्र के समान (मृड) सुख ही देता है। ऋग्वेद के इस सूक्त में 15 ऋचाएं है परन्तु हम एक ऋचा और देकर विषय को विराम देते हैं।

विद्वानों को चाहिए कि सभी सामान्य जनों को श्रेष्ठ भोजन का ज्ञान देकर स्वस्थ बनावें।

त्रातारो देवा अधि वोचता नो मा नो निद्रा ईशत सोम जल्पिः।

वयं सोमस्य विश्वह प्रियासः सुवीरासो विदथमा वदेम।।

ऋ. 8. 48. 14

अर्थ-हे (त्रातार:) रक्षकों। (देवा:) हे विद्वानों। आप सब मिलकर (न: अधिवोचत) हम अशिक्षितों को भली प्रकार सिखला दें जिससे (निद्रा: मा न: ईशत) निद्रा, आलस्य, क्रोधादि दुर्गुण हमारे स्वामी न बन जाएं (उत) और (जल्पि:) निन्दक जन भी (मा न:) हमारी निन्दा न करें। (विश्वह) सब दिन (वयम्) हम (सोमस्य प्रियास:) प्रभु के प्रिय बने रहें और (सुवीरास:) सुवीर होकर (विदथम) विज्ञान का (आवदेम) उपदेश करें वा अपने घर में रहकर आपकी स्तुति वन्दना करते रहे।

पृष्ठ 4 का शेष-वृद्धावस्था आज के सामाजिक परिप्रेक्ष्य में

5. रोगी-पीड़ितों की सहायता करना।

सचमुच में, वृद्धावस्था प्राप्त व सेवानिवृत्त जन उपर्युक्त सभी कामों में पूरी श्रद्धा व लगन से जुड़ जायें तो सर्वत्र आनन्द ही आनन्द होगा और ऐसे सेवा कर्मों से समाज में पूरी इज्जत भी मिलेगी। समाज व राष्ट्र में बहुत सी ऐसी समाज सेवी संस्थाएं देखने को मिलती हैं जो अनुभवी वृद्ध व सेवानिवृत्त जनों की देख-रेख में बहुत ही भलाई के कार्य कर रही है। अर्थात् समाज सेवी संस्थाएँ वृद्धवस्था प्राप्त व सेवानिवृत्त जनों के लिए वह कर्म भूमि है, जहाँ वे अपने ज्ञान, धन व शक्ति को अनुभव के आधार पर सांझा करते हुए अपने 'स्व' का विस्तार कर सकते हैं। तब ऐसे लोगों की एक अलग दुनिया बनती है। कहते हैं समाज में तीन चीजों का अभाव सदा ही बन रहता है-ज्ञान, धन व न्याय। इन तीनों अभावों की पूर्ति में वृद्धजनों (सेवानिवृत्तजन) की महती भूमिका है।

अत: अपने विषय-बिन्दु को और अधिक विस्तार न करते हुए सभी पाठकवृन्दों के करबद्ध प्रार्थना ही करना यथोचित समझूंगा कि सभी यह संकल्प लें कि हम अपने वृद्धजनों का सम्मान सदैव ही करेंगे। क्योंकि इनकी सेवा व सम्मान में ही सर्वत्र सुखों की वर्षा होती है और सभी आनन्द में रहते हैं।

अत: पुन: संकल्प को दोहराते हुए निवेदन है-

माता-पिता व वृद्धजन की सेवा से जीवन आनन्द से भर जाता है।

वही संतति सुख पाती है, जिन्हें इनके आशीर्वाद से जीवन भर जाता है।

पृष्ठ 6 का शेष-महर्षि जी के अन्तिम समय का...

समय समाधिस्थ रहकर नमन खोलकर कहने लगे:-

"हे दयामय हे सर्वशक्तिमान् ईश्वर तेरी यही इच्छा है, तेरी यही इच्छा है, तेरी इच्छा पूर्ण हो। आहा! तूनै अच्छी लीला की।"

बस इतना ही कहा, महर्षि देव दयान्द सरस्वती से श्वास को रोककर एक ही बार में बाहर निकाल दिया।

इस प्रकार भारत विधाता परिव्राजकाचार्य महर्षि दयानन्द सरस्वती ने भौतिक शरीर का परित्याग कर निर्वाण पद प्राप्त किया। उस समय सन्ध्या के छह बजे थे तथा दीपमाला (दीपावली) का दिन था। विक्रमी सम्वत् १९४० कार्तिक बदी अमावस्था दिन मंगलवार सन् 30 अक्तूबर १८८३ ई० था।

नोट-इस लेख में महर्षि जी को कालकूट विष, साथ में काँच पीस कर दूध में देने वाले का नाम धौल मित्र रसोइये का नाम आया है, परन्तु महर्षि जी के कई जीवन चरित्रों में जगन्नाथ रसोइये का नाम आया है, सोये दो नाम के अलग-अलग दो व्यक्तियों के नाम है या एक ही व्यक्ति के यह दो नाम है, कुछ लिख नहीं सकते। दोनों ही नाम एक ही व्यक्ति के जान पड़ते है। इसी को मानना उचित है। कृपया पाठकगण इस लेख को खूब ध्यान से पढ़े तथा महर्षि के जीवन से परोपकार करने की शिक्षा को ग्रहण करे तभी मेरा परिश्रम सफल होगा।

पृष्ठ 8 का शेष-अन्तर्जालीय छः दिवसीय...

कहा कि हमारे वैदिक सिद्धान्तों के विरूद्ध नाना प्रकार के षड्यंत्र किये जा रहे हैं जिससे बचते हुये हमें अपने वैदिक सिद्धान्तों को विश्वभर में फैलाना है तथा आर्य समाज के कार्यों को आगे बढ़ाना है। इस सोशल मीडिया पर चल रहे वेद प्रवचन के कार्यक्रम के समापन समारोह पर आर्य समाज शहीद भगत सिंह नगर जालन्धर के प्रधान श्री रणजीत आर्य जी ने सबका आभार व्यक्त करते हुये कहा कि जालन्धर के अतिरिक्त पंजाब के भिन्न भिन्न शहरों से जुड़े विदेशों में रह रहे आर्यजनों को सोशल मीडिया के द्वारा आचार्य विष्णुमित्र वेदार्थी जी के प्रवचन एवं आर्य जगत के प्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री दिनेश पथिक, आचार्य देव, सुरेन्द्र सिंह गुलशन सोनू भारती, संगीता आर्या एवं सीमा मेहता जी के भजनों का आनन्द लिया। सम्माननीय प्रधान श्री सुदर्शन शर्मा जी की प्रेरणा से हम यह कार्य कर सके हैं और घरों में बैठे बैठे कार्यक्रम का आनन्द लिया। इस समारोह को गुरु विराजानन्द स्मारक समिति के प्रधान और दोआबा कालेज के पूर्व प्रधानाचार्य जी ने भी सम्बोधित किया।आर्य समाज के महामंत्री श्री हर्ष लखनपाल जी ने बहुत ही सुन्दर ढंग से इस कार्यक्रम को सफल बनाने के लिये कार्य किया। सोशल मीडिया सुचारू ढंग से कार्यक्रम को चलाने के अमन आर्य, वंश आर्य जी का उल्लेखनीय योगदान रहा।

इस वेबिनार को श्री विनोद भारद्वाज जी प्रधान आर.के.आर्य कालेज नवांशहर, श्री डा. राकेश आर्य, श्री विनय सोफ्ट, डा. दीपिका ए.भाटिया, श्रीमती अनु वासुदेवा एवं आर.के.आर्य कालेज के कार्यकारी प्रिंसीपल डा. संजीव डाबर ने भी सम्बोधित किया।

आर.के.आर्य कालेज नवांशहर

(प्रथम पृष्ठ का शेष)

हुए कहा कि हमें महर्षि दयानन्द की दी हुई शिक्षाओं को जीवन में धारण करना चाहिए। उन्होंने कहा कि मनुष्यों को अपनी इन्द्रियों पर संयम रखना चाहिए। इन्द्रियों पर संयम रखने से मनुष्य के अन्दर सदाचार की वृद्धि होती है, उसका मन बाहरी विषयों की ओर प्रवृत्त नहीं होता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के जीवन से प्रेरणा लेनी चाहिए जिन्होंने अपने मान-अपमान की चिन्ता न करते हुए समाज के कल्याण के लिए कार्य किए। लोगों को अन्धविश्वासों, कुरीतियों, पाखण्डों से मुक्त किया।

तीसरे दिन के दूसरे सत्र को सम्बोधित करते हुए दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री विनय आर्य जी ने शिक्षकों से अनुरोध किया कि वे नौजवान पीढ़ी को अन्धविश्वासों से बचाएं। उन्होंने कहा कि विद्यालय बच्चों को सक्षम बनाएं ताकि वो इन विज्ञापनों के जाल में न फंसे। बच्चों को सत्य और असत्य के बारे में पता होना चाहिए। उन्हें जीवन में आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करें।

कार्यक्रम के अन्तिम दिन का शुभारम्भ करते हुए कॉलेज प्रबन्धकर्तृ समिति के प्रधान श्री विनोद भारद्वाज जी ने अपने विचार रखे। उन्होंने कार्यक्रम के विषय की महत्ता बताते हुए सभी प्रतिभागियों तथा वक्ताओं का आभार प्रकट किया। इस सत्र में आहार विशेषज्ञ व पोषणविद् श्रीमती दीपिका भाटिया ने पहले सत्र की शुरूआत की। उनकी चर्चा का विषय शाकाहार रहा। उनके द्वारा बताई गई कुछ विशेष बातें इस प्रकार हैं-

-शान्ति हमारे भोजन से शुरू होती है।

- भोजन पैदा होता नहीं बल्कि किया जाता है।

-भोजन धरती, सूर्य की किरणों और वर्षा से बनता है।

उन्होंने कहा कि जानवरों पर अत्याचार बन्द होने चाहिए। उन्होंने शाकाहार अपनाने पर जोर दिया और कहा कि जानवरों का माँस खाने से उन्हें आहार में दिए गए एंटीबायोटिक का असर भी हमारे शरीर पर होता है। दूसरे सत्र के वक्ता आचार्य वागीश ने कर्मफल के विषय पर बात की। जीवन की डोर हमारे अपने हाथ में है। जीवन में कर्म करना हमारे हाथ में है परन्तु अच्छे व बुरे कर्म का फल देना ईश्वर के अधीन है। उन्होंने कोरोना वायरस पर भी अपने विचार रखे। अंत में कॉलेज के प्रिंसिपल डॉ. संजीव डाबर ने चार दिनों की इस वर्चुअल मीटिंग में भाग लेने वाले सभी अध्यापकों का अभिनन्दन किया। उन्होंने चारों दिन अपने विचार रखने वाले सभी वक्ताओं का धन्यवाद किया। इसी के साथ उन्होंने कॉलेज प्रबन्ध कमेटी के प्रधान श्री विनोद भारद्वाज व अन्य सदस्यों श्री जिया लाल, श्री सुशील पुरी, आदि का धन्यवाद किया। समस्त आर्य समाज के महानुभावों के सहयोग के लिए धन्यवाद किया गया। कार्यक्रम का संचालन कार्यक्रम के समन्वयक डॉ. विनय सोफत ने किया।

अन्तर्जालीय छः दिवसीय वेद प्रवचन का आयोजन

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के तत्वावधान में आर्य समाज शहीद भगत सिंह नगर जालन्धर की ओर से छः दिवसीय अन्तर्जालीय वेद प्रचार समारोह का आयोजन किया गया। इस समारोह को सभा प्रधान श्री सुदर्शन शर्मा जी, सभा महामंत्री श्री प्रेम भारद्वाज जी, रजिस्ट्रार श्री अशोक परूथी जी एडवोकेट, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली के महामंत्री श्री विनय आर्य जी, श्री विष्णुमित्र वेदार्थी बिजनौर ने सम्बोधित किया। आर्य समाज शहीद भगत सिंह नगर जालन्धर के प्रधान श्री रणजीत आर्य जी ने भी समारोह को सम्बोधित किया। श्री आचार्य देव जी दिल्ली एवं सोनू भारती जी के मधुर भजन हुये।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के तत्वावधान में आर्य समाज शहीद भगत सिंह नगर जालन्धर की ओर से छः दिवसीय अन्तर्जालीय वेद प्रचार समारोह का आयोजन किया गया। इस समारोह में वैदिक विद्वान आचार्य विष्णुमित्र वेदार्थी ने प्रतिदिन स्तुति विज्ञान, प्रार्थना विज्ञान, उपासना विज्ञान व गायत्री महामंत्र आदि आध्यात्मिक विषयों पर वेद प्रवचन किये। आचार्य वेदार्थी जी ने कहा कि किसी पदार्थ के गुणों का ठीक ठीक वर्णन करना स्तुति कहलाता है। यद्यपि सांसारिक व्यवहार में हम ईश्वर,जीव व प्रकृति का गुणगान करके इन तीनों ही नित्य पदार्थों की स्तुति करते हैं। आध्यात्मिक वृत्ति वाला ईश्वर का उपासक सांसारिक व्यवहार से हट कर भिन्न समय संध्या काल में ईश्वर का ही चिन्तन करता हुआ उसकी स्तुति करता है। ईश्वर की ठीक ठीक स्तुति, वेदादि सत्य शास्त्रों से उसके गुणों का सही सही बोध करके ही की जा सकती है अत: स्वाध्याय के द्वारा ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव का ज्ञान अवश्य कर लेना चाहिये।

आचार्य विष्णु मित्र वेदार्थी ने प्रभु भक्ति का दूसरा अंग प्रार्थना को बताया। प्रार्थना को परिभाषित करते हुये उन्होंने कहा कि प्रार्थना सदैव चेतन से ही करनी चाहिये क्योंकि जड़ पदार्थ प्रकृति से प्रार्थना करना संभव है। यद्यपि सांसारिक व्यवहार में सामर्थ्यवान जीवों से भी प्रार्थना की जाती है किन्तु आध्यात्मिक क्षेत्र का पुजारी संध्या में परमेश्वर से ही प्रार्थना करता है। आचार्य वेदार्थी ने ईश्वर भक्ति का तीसरा अंग उपासना को बताया। उन्होंने उपासना को परिभाषित करते हुये कहा कि परमेश्वर के समीपस्थ होना उपासना कहलाता है। परमेश्वर को प्राप्त करने के लिये जो जो काम करने होते हैं योगाभ्यास के उन सब यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान व समाधि आदि कर्मों का नाम उपासना है। उन्होंने इन तीनों के फलों का वर्णन करते हुये कहा कि स्तुति से ईश्वर में अति प्रेम उत्पन्न होकर उसके गुण, कर्म, स्वभाव से अपने गुण, कर्म, स्वभाव का सुधार होता है। प्रार्थना करने से अभिमान का नाश व उत्साह और सहायता मिलती है तथा उपासना के करने से परमेश्वर से मेल व उसका साक्षात्कार होता है।

आचार्य जी ने गायत्री मंत्र की व्याख्या करते हुये कहा कि इस मंत्र में ईश्वर स्तुति, प्रार्थना व उपासना यह तीनों ही विद्यमान है। इस मंत्र के द्वारा उपासक के समस्त क्लेश नष्ट होकर मन निर्मल हो जाता है इसलिये गायत्री मंत्र का जप अर्थ का चिन्तन करते हुये प्रतिदिन लम्बे समय तक करना चाहिये। इस अवसर पर आर्य भजनोपदेशक श्री दिनेश पथिक, आचार्य देव आर्य दिल्ली, श्रीमती संगीता आर्या सहारनपुर, श्री सुरेन्द्र गुलशन जालन्धर, आर्य समाज शहीद भगत सिंह नगर की भजन गायिका श्रीमती सोनू भारती, जालन्धर की प्रसिद्ध भजन गायिका सीमा मेहता ने भजन व गीतों से सैंकड़ों श्रद्धालुओं को भाव विभोर किया।

समारोह में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महामंत्री श्री प्रेम भारद्वाज जी ने अपने विचार व्यक्त करते हुये कहा कि इस कोरोना रूपी संकट में भी इस प्रकार के संगोष्ठियों का आयोजन किया जाना अत्यन्त प्रशंसनीय है। इसके लिये मैं आर्य समाज शहीद भगत सिंह नगर जालन्धर के प्रधान श्री रणजीत आर्य तथा मंत्री श्री हर्ष लखनपाल जी के साथ साथ सभी आयोजक वृन्दों को साधुवाद देता हूं। जिनके निरन्तर प्रयास में संगोष्ठी आयोजित की जा सकी। जिसमें भाग लेकर देश विदेश के सैंकड़ों लोगों ने विभिन्न विषयों के ज्ञान से अपने आप को लाभान्वित किया। सभा के उप प्रधान श्री देवेन्द्र शर्मा जी ने कहा कि ईश्वर आपके कर्मों के आधार पर आप को फल देता है, डिग्रियों के आधार पर नहीं इसलिये सद्कर्मों को करते रहना चाहिये। सभा उप प्रधान प्रो. स्वतंत्र कुमार जी ने कहा कि आयुर्वेद का हमारे जीवन में विशेष महत्व है अत: आयुर्वेद को अपनाएं एवं अपने जीवन को संतुलित बनाएं। सभा के रजिस्ट्रार श्री अशोक परूथी जी ने आर्य समाज शहीद भगत सिंह नगर जालन्धर के सभी सदस्यों को बहुत बहुत शुभकामनाएं दी और कहा कि इस कोरोना काल में घर बैठे ही प्रवचन एवं भजनों का भरपूर आनन्द लिया। उप प्रधान चौधरी ऋषिपाल सिंह एडवोकेट ने कहा कि ईश्वर इस संसार के कण कण में व्याप्त है। अत:उसके द्वारा प्रदत वस्तुओं का त्याग पूर्वक भोग करना चाहिये। आर्य समाज शहीद भगत सिंह नगर जालन्धर के प्रधान एवं आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मंत्री श्री रणजीत आर्य जी को शुभकामनाएं देता हूं कि उन्होंने आधुनिक युग में मोबाइल पर तुम्हें घर बैठे ही विद्वान के प्रवचन एवं भजन सुनने का मौका मिला।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के महामंत्री श्री विनय आर्य जी ने (शेष पृष्ठ सात पर)

स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की तरफ से मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक प्रेम भारद्वाज द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड जालन्धर पंजाब से मुद्रित एवं गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से प्रकाशित। सम्पादक-प्रेम भारद्वाज
पीआरबी एक्ट के तहत प्रकाशित सामग्री के चयन हेतु उत्तरदायी किसी विवाद का न्यायिक क्षेत्र जालन्धर होगा। आर एन आई संख्या 26281/74 E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org